न सोना, नवीन अपक्क फल की ओर उँगली न उठाना, नीच जाति का स्पर्शित अन्न भोजन न करना, चैल, अजिन, कुश, और कम्बल आसन पर बैठ कर उपासना करना, सौभाग्यवती स्त्रियों को स्वर्ण-मय अलङ्कार आदि धारण करने की आज्ञा देना, और विधवाओं को न देना आदि सब नियम ही इस ताडितविज्ञान उन्नति के प्रमाण हैं। आजकल की विज्ञानदृष्टि से यह प्रमाण ही हो चुका है कि अष्टधात बज्रपात को निवारण करता है इस कारण मन्दिरों पर वह स्थापन किया जाता है; उसी प्रकार उत्तर सिरा होकर सोने से कुस्वप्न देखने की सम्भावना हैं; क्योंकि स्वाभाविक ताडितप्रवाह दक्षिण से उत्तर की ओर प्रवाहित है इस कारण उस रीति पर सोने से शोणित कीं गति पद की ओर से मस्तक की ओर अधिकरूपेण हो सक्ती है। उसी कारण शारीरिक ताडित द्वारा अपक्कफल तब ही दूषित हो जायगा जब उस की ओर उंगली उठाई जायगी; उसी कारण शूद्र में तमोगुण अधिक होने के कारण उस का छुआ हुआ, अन्न भी उस की दूषित ताडितद्वारा दोषयुक्त हो जाने पर श्रेष्ठ ताडित ब्राह्मण देह के लिये अहितकारी ही है। पृथिवी सदा जीव शरीर अन्तरगत ताडित को खेंचा करती है, उपासना करते समय मनुष्य शरीर में सात्विक ताडित का बढ़ना सम्भव है; परन्तु पृथिवी पर बैठ कर उपासना करते समय वह ताडितसंग्रह पृथिवी द्वारा नाश को प्राप्त हो सकता है, किन्तु चैल, अजिन, कुश, और कम्बल में ताडित ग्रहण करने की शक्ति नहीं है (वे Nonconduiterहैं) इस कारण उन पर बैठकर साधन करने से वह क्षति नहीं होगी। और उसी कारण सुवर्ण आदि धातु ताड़ित शक्ति वृद्धि कारक हैं, ताडितशक्ति वृद्धि से

शारीरिक इन्द्रियों की विशेष स्फूर्ति होती है, इन्द्रियों की विशेष स्फूर्ति होने से स्त्रीगण सुसंतान उत्पन्न कर सकती हैं; इस कारण ही आर्य्य सदाचार ने सद्रूपास्त्रियों को अलंकार धारण करने की और विधवा स्त्रियों को अलंकार धारण नहीं करने की आज्ञा दी है। ताडित विज्ञान पूर्ण इन आचारों को सुनकर साधारण बुद्धियुक्त मनुष्य भी समझ सकते हैं कि प्राचीन आर्य्यगणों नें इस सूक्ष्म विज्ञान को किस उन्नत अवस्था में पहुंचा दिया था। योगविज्ञान की मुक्ति सहायकारी जो शक्ति है सो तो विलक्षण ही है परन्तु इस विज्ञान की और भी भौतिक शक्तियों की अद्भुतता अब जगत् में प्रसिद्ध ही हो रही है योग शक्ति द्वारा मेघ वायु आदि स्तम्भन करना, शून्यमार्गसे विचरणकरना शरीरको लघु अथवा भारी कर लेना; प्रस्तर अथवा मृत्तिका आदि पदार्थ में प्रवेश करना, दूरस्थित विषय को सुनना अथवा देखना दीर्घ आयु और इच्छा मृत्यु होना, क्षुधा पिपासा जय करना, और औरनाना ग्रह उपग्रहों में संयम करके अथवा भविष्यत् प्रारब्ध में संयम करके उन के विषयों को जान लेना आदि नाना ऐसी विभूतियों की प्राप्ति हो सक्ती है; इस प्रकार की शक्ति जीव में कैसे प्राप्ति हो जाती है उस का प्रमाण वेद और नाना योग सम्बन्धीय शास्त्र दे रहे हैं। डाकटर पाल(Dr. Paul.) साहब ने अपने योगविज्ञान नामक पुस्तक में वैज्ञानिक युक्ति द्वारा पूर्णरूपेण प्रमाणित कर दिखाया है कि प्राणायाम साधन द्वारा किस प्रकार से योगीगण दीर्घआयु तथा भूत जय कर सक्ते हैं; इस प्रकार से उक्त पश्चिमी पण्डित महाशय ने अष्टाङ्ग योग की बहुत ही प्रशंसा करके योग के आठों अङ्गों की योग्यता और अद्भुत अलौकिक शक्तियों का वर्णन अपने पुस्तक में किया है। प्रत्यक्ष प्रमा-

ण में सन्देह हो ही नहीं सक्ता; जब यूरोपवासी विद्वानूगणों ने प्रत्यक्ष दृष्टि से पञ्जाब केशरी महाराजा रणजीतासिंह की सभा में योगीवर हरिदास स्वामी को छः मास तक पृथिवी के अन्तरगत जड़ समाधि अवस्था में रहते हुए देखा, जब उन्हों ने देखा कि एक जीवित मनुष्य को पृथिवी खनन करके गाड़ दिया गया और उस के ऊपर की मृत्तिका पर जव वपन करके पहरे बिठा दिये गये, पुनः जब उनको छः महीने पूरे होने पर निकाला गया तो वे जीवित ही मिले; तब उन विद्वानों के हृदय में और कहां से सन्देह रहेगा। वे विद्वानूगण उसी प्रकार मदरास के योगी को कुम्भकद्वारा आकाश में स्थित देखकर और कलकत्ते के भूकैलास स्थित योगी को श्वास रहित समाधिअवस्था में देख कर अतीव मोहित हुए। इन तीनों उदाहरणों को प्रमाण रूपेण उन्हों ने अपने अपने पुस्तकों में भी लिखा है। यदिच उन्हों ने प्रत्यक्ष भी कर लिया है तत्राच योग शक्ति का कारण अभी तक वे अन्वेषण नहीं कर सके हैं; योग क्रिया में जो बालक हैं ऐसे पुरुषों की भस्ति, नलक्रिया, और शङ्खप्रचाल, आदि क्षुद्र क्रियायें जो आजकल सचराचर देखने में आती हैं पश्चिमी विद्वानूगण वैज्ञानिक बुद्धि द्वारा अभी तक इन क्रियाओं तक का कारण नहीं जान सके॥

ज्योतिष शास्त्र उन्नति

गणित ज्योतिष और फलित ज्योतिष इन दोनों शास्त्रों का आविष्कार आदिकाल में इस भारत भूमि से ही हुआ है; और केवल विद्याओं का आविष्कार ही नहीं हुआ था किन्तु इन के प्रत्येक विभाग इतनी उन्नति को पहुंचे थे कि जिन सब विभागों को अभी तक पश्चिमी वैज्ञा-

निकगण समझ ही नहीं सके हैं। यदिच उन्हों ने आज कल यन्त्रों की सहायता से गणितज्योतिष की कुछ उन्नति की है तत्राच फलित की सूक्ष्मता को वे अभी तक पहुंच ही नहीं सके हैं। प्राचीन काल में ज्योतिषशास्त्र की पूर्ण उन्नति नहीं हुई थी ऐसा कोई कोई एकदेशदर्शी भावुकगण प्रमाण किया करते हैं, परन्तु आर्य्य शास्त्र न देखने से ही वे ऐसा कहा करते हैं। ग्रह, नक्षत्र, राशीचक्र, नक्षत्रचक्र, अंश, विषुवरेखा, गोलकार्ध, उदीचीन राशी आदि राशी भेद, क्रान्ति, केन्द्रव्यासनिरूपण, सुमेरु, कुमेरु, छायापथ, ग्रह, उपग्रह, कक्ष, धूमकेतु, उल्कापिंड, निर्घात, मध्याकर्षणशक्ति, सूर्य्यमहासूर्य्यआदिभेद, पृथिवी, आदि की आकृति, ग्रहणनिर्णय आदि सकल गभीर विषयों का सिद्धान्त जब प्राचीन आर्य्यों के ग्रन्थों में देखते हैं तब कैसे कहेंगे कि उन्होंने इस शास्त्र की पूर्ण उन्नति नहीं की थी। विष्णुपुराण में लिखा है कि "स्थालस्थिमग्निसंयोगा दुद्रेकि सालिलंयथा। तथेन्दु वृद्धौ सलिलमम्भोधौ मुनिसत्तमाः॥ न न्यूना नातिरिक्ताश्च बर्द्धन्त्यापोह्रसन्तिच। उदयास्तमनेष्विन्दोः पक्षयोः शुक्लकृष्णयोः॥ देशोत्तराणि पञ्चैव अङ्गुलानां शतानिवै। अपां बृद्धिक्षयौदृष्टौ सामुद्रीणां महामुने॥ अर्थात् जवार भाटा से यथार्थ में समुद्रका जल ह्रास और बृद्धि को प्राप्त नहीं होता है, परन्तु स्थाली में जल रख कर वह अग्निपर रखने से जैसे अग्निउत्तापद्वारा जल में उफान आने से वह जल बृद्धि को प्राप्त हो जाता है, वैसे ही शुक्ल और कृष्ण पक्ष की चन्द्रकला द्वारा आकृष्ट हो कर समुद्रजल ह्रास बृद्धि को प्राप्त हुआ करता है। आर्य्यग्रन्थों में ऐसे प्रमाण देखने से किस को विश्वास न होगा कि आर्य्य गणों को ग्रह-आकर्षण शक्ति और जवारभाटा का कारण ज्ञात न था। वार और तिथी आदि

को आर्य्य महर्षिगणों ने ही प्रथम आविष्कार करके समय की शृङ्खला की थी; सालभर में जोन से दिन दिवा रात्रि समान होता है वह यूरोपीय पण्डित टोलेमी (P. tolemy. जिस को यूरोपजाति इस नियम के आविष्कर्त्ता मानते हैं) के जन्म लेने से बहुत काल पूर्व ही प्राचीन आर्य्य आचार्य्यगण द्वारा निरूपित हो चुकाथा। सूर्य्यसिद्धान्त ग्रन्थ में लेख है कि, "सर्वतः पर्वतारामग्रामचैत्यचयैश्चितः। कदम्बः केशरग्रन्थिकेशरप्रसवैरिव" ॥ अर्थात् कदम्ब जिस प्रकार केशर समूह द्वारा वेष्टित होता है उसी प्रकार पृथिवी भी ग्राममें वृक्ष पर्वत आदि द्वारा वेष्टित है। नक्षत्र कल्प में लेख है कि, "कपित्थफलवद्विश्वं दक्षिणोत्तरयोः समं"। अर्थात् कपित्थ फलके नाई पृथिवी गोलाकार है, परन्तु केवल उत्तर और दक्षिण में कुछ समान अर्थात् दबी हुई है। जब पश्चिमी विद्वान् गण पृथिवी को नारंगी के साथ उपमा देते हैं; तब आर्य्यगणों को कदम्ब और कपित्थ के साथ उस की उपमा देने से क्या विद्वान् गण नहीं समझ सकेंगे कि प्राचीन आर्य्यगण पृथिवी के स्वरूप के पश्चिमी वैज्ञानिक गणों से पूर्व ही भली भांति जानते थे। आजकल विद्यार्थियों के शिक्षाके अर्थ गोलक प्रस्तुत (Globe) किया जाता है; परन्तु जब प्राचीन आर्य्य ग्रन्थों में देखते हैं कि वे भी शिष्यों को दारुमय खगोल और भूगोल रचना द्वारा शिक्षा दिया करते थे,तब कौन बुद्धिमान् नहीं विश्वास करें गे कि वे भी इस नवीन रीति को भलीभांति जानते थे। आज कल की शिक्षा में प्रधान दोष यह है कि भारत बासीगण पूर्णशिक्षाको प्राप्त नहीं होते, चाहे पश्चिमी अंग्रेजी भाषा चाहे संस्कृत विद्या किसी में परिश्रम करते हों परन्तु पूर्ण परिश्रम नहीं करते; द्वितीयतः अपने वर्त्तमान भ्रमों के दूर करने के अर्थ दोनों शास्त्रों का भली भांति संग्रह कर के तत्पश्चात्

दोनों के गुणों को परस्पर विचारद्वारा सत्य का अन्वेषण करें तभी सत्य का अनुसंधानकर सकें गे; नहीं तो एक विद्या को ही असम्पूर्ण जान कर सत्य अनुसन्धान करना विडंबनामात्र होगा इस में सन्देह नहीं आर्य्य-भट्टजी ने लिखा है कि,"चलापृथ्वी स्थिराभाति„ अर्थात् पृथिवी चलती है परन्तु ठहरी हुई अनुभव होती है; पुनः आर्षग्रन्थों में लेख है कि, भपंजरः स्थिरोभूरेवावृत्यावृत्य प्रातिदिवसिकौ। उदयास्तमयौ सम्पादयाति नक्षत्र ग्रहाणाम् ॥ अर्थात् नक्षत्र मंडल राशीचक्र स्थिर हो रहे हैं परन्तु पृथिवी बारंबार घूमती हुई ग्रह नक्षत्रों का दैनिक उदय अस्त सम्पादन किया करती है; इन लेखों को देखने से कौन नहीं विश्वास करेगा कि प्राचीन आर्य्यगण पृथिवी की गति को नहीं जानते थे। जब आचार्य्यों के ग्रन्थों में देखते है कि "भूगोलो व्योम्नि तिष्ठति" अर्थात् पृथिवी शून्य में ही स्थित हैं, पुनः जब भास्कराचार्य्य को कहते हुए देखते हैं कि, "नान्याधारं स्वशक्त्या वियति च नियतं तिष्ठतीहास्य पृष्ठे। तिष्ठद् विश्वंच शश्वत् सदनुजमनुजादित्यदैत्यं समंतात्" ॥ अर्थात् पृथिवी बिना आधार के ही अपनी शक्ति द्वारा आकाश मण्डल में स्थित है, और उसके पृष्ठ पर चारों ओर देवदानव मानव आदि निवास कर रहे हैं; तब कैसे विश्वास नहीं करेंगे कि वे पृथिवी की स्थिति को भली भांति नहीं जानते थे। जब ब्रह्मपुराण में देखते हैं कि "पर्वकालेतु सम्प्राप्ते चन्द्रार्कौछादयिष्यसि। भूमिच्छायागतश्चन्द्रश्चन्द्रगोऽर्कं कदाचन" ॥ अर्थात् पूर्णिमा आदि पर्व्व दिन में तुम चन्द्र सूर्य्य को आच्छादन करोगे, पुनः ज्योतिष आचार्य्यों के ग्रन्थ में देखते हैं कि,"छादको भास्करस्येन्दुरधःस्थो घनवद्भवेत्। भूच्छायां प्रमुखश्चन्द्रो विशत्यार्थोभवेदसौ" ॥ अर्थात् मेघकी नाईं चन्द्र सूर्य्य के अ-

धस्थ हो कर सूर्य्य को आच्छादित करता है, और चन्द्रभूच्छाया में प्र· वेश करता है; तब कौन बुद्धिमान् गण नहीं जान सकते हैं कि प्राचीन भारत बासीगण ग्रहण विज्ञान को भली भांति नहीं जानते थे। इस प्रकार से ज्योतिषशास्त्र की उन्नति के विषय में जितना विचार करेंगे उतना ही सिद्धान्त दृढ़ होता जायगा कि इस गभीर विज्ञान शास्त्र में प्राचीन भारत ने बहुत ही उन्नति की थी। बिना गणित ज्योतिष के फलित ज्योतिष कार्य्यकारी नहीं होता इस कारण भारत का फलित शास्त्र ही गणित शास्त्र की उन्नति का प्रमाण है। आज कल के यूरोपीय सम्बादों का पाठ करने से बुद्धिमानमात्र ही जान सकेंगे कि आज दिन यूरोप वासी किस प्रकार से मेटी ओरोलोजी (Meteorolojy.) विद्या पर से अपनी दृष्टि हटा कर फलित ज्योतिष की सत्यता की ओर दृढ़ करते जाते हैं। आज दिन यूरोप का यह फलित ज्योतिष का पक्षपात ही हमारे इस गणित एवम् फलित ज्योतिष विषयक सिद्धान्त को पूर्णरूपेण दृढ़ कर रहा है।

पुराणों की अद्भुतता

यह यथार्थ ही है कि पुराणों के वर्णन में कहीं कहीं वैज्ञानिक प्रमाण विरुद्धता पाई जाती है; परन्तु पुराण का यथार्थ स्वरूप जानने पर वह पौराणिकरूपक से बुद्धिमानों को कोई भी हानि नहीं पहुंचा सकती। पूज्यपादमहर्षिगण पूर्व्व ही पुराण संहिता में कह चुके हैं कि पुराण में तीन प्रकार की भाषा हुआ करती है, यथा समाधिभाषा, परकीयभाषा, और लौकिकभाषा, समाधिभाषा उसे कहते हैं कि जो आचार्य्य गणों ने समाधिस्थ हो अनुभव कर लोकोपकारार्थ पुराणों में प्रकाश किया

है। समाधि में किसी दृश्य पदार्थ का तो अनुभव किया ही नहीं जाता है; परब्रह्म, ईश्वर, जीव, सृष्टि, स्थिति, लय, और कर्म्म विवरण, येही विषय समाधि गम्य हैं, इनहीं विषयों का विवरण पुराणों के जिन जिन स्थानों पर आवे उनही को समाधिभाषा कहते हैं। परकीय भाषा उसे कहते हैं कि जो विषय आचार्य्य गणों ने औरों से सुनकर लोकरञ्जनार्थ अथवा समाज के उपकारार्थ पुराण में वर्णन किया हो। जहां परकीय भाषा आती है वहां प्रायः ऐसा लेख होताहै कि " अमुक ने ऐसा कहाथा" जहां इस प्रकार की सुनी हुई बात का कथन हो उसी को परकीयभाषा समझना उचित है लौकिक भाषा उसे समझना चाहिये कि जहां लौकिक रीति के अनुसार कोई प्रसंग का वर्णन हो, और ग्रन्थ के मूल आशय से उसका विशेष सम्बन्ध न हो जैसे श्री भागवत में वर्णन है कि " जब श्री भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी के सत्संग करते करते रात व्यतीत होगई और कुक्कुट पक्षी बोलने लगे तब गोपिनी गणों ने व्यथित हो उन पक्षियों का तिरस्कार किया, इत्यादि; " इस प्रकार की रञ्जितभाषा जहां आवे उसको लौकिकभाषा कहना उचित है। इन तीन प्रकारकी भाषाओं में से समाधिभाषाको सत्वरूपमय अभ्रान्त, और लौकिक और परकीयभाषा को अतिरञ्जित और रूपकमय कहा है। आचार्य्यगणों ने तो सब कुछ ही स्पष्टरूपेण कह दिया है, परन्तु जो कुछ फेर पड़ता है वह अल्पज्ञ जीव की बुद्धि से ही पड़ता है वैज्ञानिक सिद्धान्त तो यथार्थ में सत्य और अभ्रान्त ही है; परन्तु लोक शिक्षार्थ यदि आवश्यक समझ कर महर्षि गणों ने उनको रूपकरूपेण अतिरञ्जित कर के कहीं कहीं प्रकाश किया हो तो उस से मूलविज्ञान में कोई भी दोष स्पर्श नहीं करेगा; जो जैसा अधिका-

री है वह वैसा ही समझेगा । इस प्रकार से सनातनधर्म शास्त्रोक्त नाना ग्रन्थों में तीन प्रकार की भाषायें देखने में आती हैं, यहां तक कि वेद में भी उपाख्यान आदि दृष्टिगोचर हुआ करते हैं । इस प्रकार की विभिन्नभाषा केवल विचार की दृढ़ता कराने तथा अधिकार के अनुसार नाना भाव विकाश के अर्थ ही हैं,इन को देखकर यदि च प्रथम दृष्टि में धोखा हो सकता है,परन्तु सूक्ष्म विचार द्वारा दृष्टि पात करने से अपने प्राचीन शास्त्रों में कहीं कुछ भी विरोध नहीं प्रतीत होता ।

वैज्ञानिक ज्ञान का प्राचीनत्व ॥

पाश्चिमी विद्वान्गण यह कहते हैं कि मध्याकर्षण शक्ति का आविष्कार करने वाले न्यूटन (Newton) साहब हैं । परन्तु जब देखते हैं कि श्रीमद्भागवत में श्रीभगवान् श्रीकृष्णचन्द्र के उपदेश में पृथिवी की मध्याकर्षण शक्ति का विस्तृत विवरण आया है; जब देखते हैं कि भाष्कराचार्य्य जी ने लिखा है कि, "आकृष्ट शक्तिश्च मही तया यत् स्वस्थंगुरुः स्वाभिमुखं स्वशक्त्या। आकृष्यते तत् पततीति भाति समे समंतात् क्वपतत्वियं खे" अर्थात् पृथिवी आकर्षण शक्ति विशिष्टा है क्योंकि कोई भारी पदार्थ आकाश की ओर निक्षिप्त करने पर पृथिवी अपनी शक्तिद्वारा उस को आकर्षण करलेती है, आकाशचारों ओर ही है परन्तु वह पृथिवीके ऊपरही गिरताहै । पुनः जबदेखते हैं कि आर्य्यभट्ट कहरहे हैं कि 'आकृष्टशक्तिश्च मही यत्तया प्रक्षिप्यते तत्तया धार्य्यते" अर्थात् पृथिवी आकर्षण शक्ति विशिष्ट है क्योंकि जो वस्तु फेंकी जाती है आकर्षण शक्ति द्वारा ही पृथिवी उस को धारण कर लेती है; तब कैसे कहेंगे कि न्यूटन साहब इस वैज्ञानिक नियम के आ-

विष्कर्त्ता हैं;जब न्यूटन साहब के जन्म ग्रहण करने से सहस्र सहस्र वत्सर पूर्व्व के ग्रन्थों में उस विज्ञान का प्रमाण मिल रहा है तब कैसे मानेंगे कि वह नियम भारत से नहीं निकला किन्तु यूरोप से निकला हैं। यूरोप के प्रसिद्ध विद्वान् वेली (Bailly) साहब, प्लेफेयर (Plo. yfair) साहब और केशेनी (Cassini.) साहब आदि बड़े बड़े महामहोपाध्याय गण मुक्तकण्ठ हो कर स्वीकार करते हैं कि पांच सहस्र वर्ष के पूर्व भारतवर्ष में जो ज्योतिष ग्रन्थ लिखे गये थे वे अब भी मिला करते हैं; भारत वर्ष ही ज्योतिष शास्त्र का आविष्कार कर्त्ता है। वर्तमान काल के प्रसिद्ध ज्योतिष शास्त्र अध्यापक कोलब्रुक (Cole-brooke) साहब प्रमाण के सहित लिखते हैं कि अतिप्राचीन काल में ज्योतिष गणना का प्रधान सहायक पृथिवी की अयनांशगति अथवा क्रांतिपात की वक्रगति (Preiession of the Equinones) को भारत वर्ष के विद्वान्‌गणों ने ही आविष्कार किया था। अब थोड़े ही दिन हुए यूरोपवासी गणों ने नानायन्त्रों की सहायता से सूर्य्य कलङ्क का (Lalor spots) अनुमान किया है, और वे ऐसा कहते हैं कि यह उन का नूतन आविष्कार है; परन्तु आर्य्यशास्त्रों को देखने से अतिसुगमता द्वारा ही यह भ्रमदूर हो सकता है। विष्णुमार्कण्डेय आदि पुराणों और बराहमिहिर आदि की ज्योतिष संहिताओं में इसका विशेष विवरण पाया जाता है; पुराणों में लेख है कि विश्वकर्म्मा ने जब अपने भ्रमीनामक यन्त्र को सूर्य्यमण्डल में प्रयोग किया था तो वह अस्त्र सूर्य्य मण्डल के जिस २ अंश में स्पर्श हुआ वही वह अंश श्यामिका को प्राप्त होगया था और वही वह अंश को सूर्य्य कलङ्क कहते हैं। प्राचीन आर्य्य जाति ही इस शास्त्र के प्रधान गुरु हैं ऐसा एक देशदर्शी

मुसलमानगण भी स्वीकार करते हैं; आरबीय "त्वारिकल हुक्मा" और "खुलाश तुल हिसाब" आदि ग्रन्थों में इस विचार का भली भांति प्रमाण मिल सकता है; उन्होंने अपने अपने ग्रन्थों में आर्य्य भट्ट का नाम "आज्यभर" और भाष्कराचार्य्य का नाम "बाखर" करके लिखा है। इन उपरोक्त विचारों से यह सिद्ध ही होता है कि इस प्रकार के गभीर वैज्ञानिक तत्व तथा वैज्ञानिक शास्त्रों का आदि गुरु भारतवर्ष ही है, और भारत की इस श्रेष्ठता को ईसाई तथा मुसलमान दोनों सम्प्रदाय ही स्वीकार करते हैं; यह मत सर्ववादि सम्मत है ग्रीक भाषा के ग्रन्थ, रोमन भाषा के ग्रन्थ, अरबीभाषा के ग्रन्थ तथा नाना यूरोपीय भाषा के ग्रन्थों से जब यही सिद्ध होता है कि प्राचीन आर्य्य जाति ही सकल मनुष्य जातियों से पहिले अपनी भारत भूमि में शिल्पनैपुण्य, तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों की प्रकाश कर्त्रीथी, जब प्राचीन महर्षि गणों के नाना ग्रन्थों में ज्योतिष विज्ञान, ताडित विज्ञान, रसायन विज्ञान, भूतत्व विज्ञान चिकित्साविज्ञान और अतुलनीय योग आदि धर्म्म बिज्ञान वर्णन देखते हैं तब निरपेक्ष विद्वान् गण मात्र ही स्वीकार करेंगे कि प्राचीन भारत ही विज्ञान उन्नति का आदि गुरु है।

सृष्टि के प्राचीनत्व पर भारत का मत

बाइविल और कुरान विश्वासकारी गण यही विश्वास करते हैं कि पृथिवी की सृष्टि केवल तीन सहस्र वर्षके लगभग हुई है; उन के विचार में मानव जाति की उत्पत्ति इस समय के अन्तर्गत ही है। परन्तु आर्य्यशास्त्र पृथिवी सृष्टि को और विलक्षणरूप से ही वर्णन

किया करते हैं, और उसकी बहुत ही प्राचीनता सिद्ध किया करते हैं। आर्य्य शास्त्रों में लेख है कि मनुष्यगणों के छः मास का एक अयन कहाता है, दो अयन का एक वर्ष होता है; ऐसे मानवगणों का एक वर्ष एकदैवअहोरात्रि के तुल्य है। इस प्रकार के दैव अहोरात्रि से दैव सम्वत्सर भी समझना उचित है; ऐसे द्वादस सहस्र दैव वर्ष से एक महायुग होता है, एक सहस्र महायुग से एक ब्रह्मा का अहोरात्र होता है, ऐसे ब्रह्मा का एक अहोरात्र ही एक कल्प कहाता है। कहीं कहीं ऐसा भी लेख है कि ७१ दैव युग का एक इन्द्रपतन, १४ इन्द्रपतन का एक मन्वन्तर; अर्थात् ७१ महायुग का एक मनुपतन, और १४ मन्वन्तर का एक ब्राह्म अहोरात्र हुआ करता है ऐसे एक एक ब्राह्म अहोरात्र अर्थात् एकएक कल्प मेंएक एक ब्राह्म प्रलय हो जाता है; ब्रह्मा जी अपने अहोरात्र के दिवा भाग में सृष्टि रच कर रात्रि भाग में निद्रित हो जातेहैं; पुनः निद्रा से उठ कर देखते हैं कि इस अवस्था में सृष्टि का प्रलय हो गया है; तो पुनः वे सृष्टि क्रिया आरम्भ करदेते हैं। इस रीति पर ब्रह्माकेएक अहोरात्र को एक मानव महाकल्प भी कहते हैं। ३६५ ब्राह्म अहोरात्र का एक ब्राह्म सम्वत्सर; १०० ब्राह्म वर्ष का एकब्राह्मपतन; अर्थात् ५० ब्राह्म वर्ष का एक परार्द्ध, और दो परार्ध का एक ब्राह्म शताब्दि हुआ करता है। ऐसे १०० वर्ष की आयु के अनन्तर ब्रह्मा का लय हो जाता है; ब्रह्मा जी के लय से जो महाप्रलय होता है उस को प्राकृत प्रलय भी कहते हैं। पूर्व्व लिखित ब्रह्मा जी की आयु का प्रथम परार्द्ध हो चुका है, अब द्वितीय परार्द्ध का प्रथम दिवस अर्थात् प्रथम कल्प चलरहा है; जिस कल्प का नाम वराहकल्प है;कहीं कहीं

इस की श्वेत बराह कल्प भी संज्ञा की गई है, क्योंकि पूर्व में कृष्ण-बराहकल्प और रक्तबराह कल्प आदि नाम से बहुत से बराह कल्प बीत चुके हैं। ऐसे श्वेतबराह कल्प का परिमाण४३२००००००० मानव वर्ष हैं; जिस में से१९७२९४८९९८ व्यतीत हो चुके हैं। मानव युग प्रमाण के सम्बन्ध में ऐसा लेख है कि, १७२८००० वर्ष का सत्ययुग, १२९६००० वर्ष का त्रेतायुग, ८६४००० वर्ष का द्वापरयुग, और ४३२००० वर्ष का कलियुग हुआ करता हैं; जिस में से सत्य, त्रेता, द्वापरयुग बीत कर अब कलियुग के भी लगभग पांच सहस्र वर्ष बीत चुके हैं। आर्य्य शास्त्रों का यह सृष्टि आयु प्रमाण सुनने से बाइबिल और क़ुरान कथित सृष्टि आयु प्रमाण बालकों की उक्ति प्रतीत होती है। पूर्व वर्त्ती पश्चिमी विद्वान्गण आर्य्य शास्त्रोक्त ऐसे प्रमाणों को देखकर चौंका करते थे और इन संख्याओं को कवि की कल्पना कह डालते थे,परन्तु जब से यूरोप में विज्ञान शास्त्र की पूर्ण उन्नति हुई है तब से उन का यह सन्देह दूर होने लगा है। भूतत्व-वित् वैज्ञानिक गणों ने पृथिवी के प्रस्तर परीक्षा द्वारा यह सिद्धान्त कर लिया है कि प्राकृत नियम के अनुसार उन में ऐसा परिवर्तन लक्षों बर्ष में हो सकता है; इस कारण अगत्या वे बाइबिल और क़ुरान के मत को भ्रमपूर्ण समझने लगे हैं। आज कल के नाना शास्त्र वेत्ता वैज्ञानिक गणों ने यह निश्चय किया है कि, सूर्य्य गर्भ से पृथिवी की उत्पत्ति, और पृथिवी गर्भ से चन्द्र की उत्पत्ति हुई है; जिस में से पृथिवी गर्भ से चन्द्र की उत्पत्ति का प्रमाण वे ५००००००००० बर्ष अनुमान करते हैं, और इसी रीति पर यदि सूर्य्य से पृथिवी सृष्टि का अनुमान किया जाय तो संख्या बहुत ही कुछ बढ़ जाय गी,

चन्द्र उत्पत्ति की संख्या से पृथिवी की उत्पत्ति की संख्या का प्रमाण बहुत ही बढ़ जाने का कारण यह है कि यह वैज्ञानिक गण चन्द्र को अभी तक असम्पूर्ण ग्रह ही मानते हैं, परन्तु पृथिवी सम्पूर्ण ग्रह है। पाश्चिमी वैज्ञानिक गणों के इन अनुसंधानों को देख कर अब कोई भी आर्य्य शास्त्रोक्त शृष्टि प्रमाण को मिथ्या नहीं मान सकता; इस कारण उन के ही वाक्य द्वारा आर्य्य ज्ञान और आर्य्य जाति की प्राचीनता सिद्ध हुई। प्रथम तो सिवाय आर्य्य जाति के और किसी को भी पृथिवी के प्राचीनत्व का बोध नहीं है, द्वितीयतः पश्चिमीअथवा आर्य्य जाति के सिवाय अन्यान्य जाति गणों में से किसी को भी अपने पूर्व पुरुषों का यथावत् ज्ञान नहीं है; तो उन पश्चिमी विद्वानों के कहने पर कैसे कोई विश्वास कर सकता है कि भारतीय आर्य्य जाति तथा यूरोपीयजाति गण सब तीन सहस्र वर्ष पूर्व मध्यएशिया में असभ्य हो कर एकत्रित वास किया करते थे। जो जाति आज दिन केवल डेढ़ वा दो सहस्र वर्ष का पता लगा सकती है बुद्धिमानगण उसके कहने का विश्वास करेंगे ? अथवा वह आर्य्य जाति जो लक्षों वर्षों का दृढ़प्रमाण देती है उसके सिद्धान्तों पर विश्वास करेंगे ? यूरोपीय ऐतिहासिक गण मध्य एशिया में सब मनुष्य जाति के बास का जो प्रमाण दिया करते हैं वह केवल कवि कल्पना मात्र है, क्योंकि आज दिन तक कोई भी पश्चिमी ऐतिहासिक पण्डित इस विषय में दृढ़ प्रमाण नहीं दे सके। यूरोपीय जाति का पूर्वदिशा से यूरोप में आ कर बास करने का प्रमाण मिलता है, परन्तु उस प्रमाण से भारतीय आर्य्य गणों के मध्य एशिया बास का कोई भी सम्बन्ध नहीं सिद्ध होता है; किन्तु उससे यही सिद्ध होता है कि यूरोपीय जाति गण भारत वर्ष के निकले हुए धर्म्मत्यागी आ-

र्ग्य सन्तानों के वंशोद्भव हैं। पुराण कथित उदभ्र और ऊमकी कथा से एडम और इभ की कथा का पूर्ण सम्बन्ध पाया जाता है।

इहलोक एवं राजनीति

ऐहलौकिक नियम तथा राज्य शासन नीति प्रचार में प्राचीन भारतवासी ही सर्वोत्कृष्ट हैं, सांसारिक शृंखला तथा प्रजा शासन नियम के प्रचार में पूज्यपाद महर्षिगण ही इस पृथिवी पर आदि और सर्व श्रेष्ठ गुरु हैं इस में सन्देह का लेश मात्र नहीं। सूक्ष्म विचार द्वारा यही सिद्ध होता है कि पारलौकिक सुख के प्राप्त करने में इस लोक में त्याग स्वीकार करना पड़ता है, परन्तु ऐहलौकिक सुख तभी हो सक्ता है जब जीव को अभाव अनुभव न हो; त्याग में अभाव अनुभव है परलोक सुख की इच्छा में अभाव अनुभव है, किन्तु ऐहलौकिक सुख में उस से विपरीत होता है; अर्थात् अभाव द्वारा ऐहलौकिक दुःख की वृद्धि और अभाव के कम होने से ऐहलौकिक सुख की वृद्धि हुआ करती है। इसी वैज्ञानिक भित्ती पर स्थित हो कर पूज्यपाद महर्षिगणो ने जो इस लोक में जीवनयात्रा निर्वाह करने की सुगम तथा अभ्रान्त युक्तियां निकाली थीं उन्हीं नियमों पर चलने के कारण ही आजदिन भारत के इस घोर आपत्ति काल में भी भारत बासी कथंचित् सुखी हो रहे हैं। गवर्नेमेन्ट की रिपोर्ट आदि सम्बादों से भली भांति सिद्ध हो सक्ता है कि प्रत्येक क्षुद्र भारत बासी का मासिक आय (आमदनी) ३) रुपये से अधिक नहीं होगा, परन्तु प्रत्येक इङ्गलेन्ड बासी का आय कम से कम ६०) रुपया है। पुनः सरकारी जेल रिपोर्ट से सिद्ध होता है कि जेलखाने के कैदियों के निमित्त हमा-

री वर्त्तमान महाराणी का प्रति मनुष्य मासिक ३॥) रुपये व्यय प-ड़ा करता है; इस विचार द्वारा यही सिद्धान्त होता है कि आजादिन भारतवासी का आय जेलखाने के कैदियों के भोजन व्यय से भी कम है; कालप्रभाव के कारण तथा अपनी निरुद्यमता के कारण भारत बासी आज दिन इतनी हीन अवस्था को पहुंच गये हैं कि दोनों समय पेट भरकर खाने योग्य आय उनको नहीं होता। ऐसी हीन अवस्था को प्राप्त हो कर भी भारतवासी सदा प्रसन्न प्रतीत होते हैं; यह प्राचीन आर्य्य जाति की शिक्षा प्रवाह का ही कारण है कि इस घोर आपत्काल में भी भारतवासीगण सुखी हो रहे हैं। इस श्रेष्ठता का कारण जीवन यात्रा के लिये अभाव की न्यूनता ही है; ऐह-लौकिक कार्य्यों में भारतवासी स्वभाव से ही अभाव कम रखते हैं, इस कारण से ही वे आज दिन जीवित रह सके; जैसी अवस्था एवं शिक्षा यूरोपवासियों की आज दिन है यदि कदाचित् उन पर यह आपत्ति काल पड़े तो कदापि वे अपने मनुष्यत्व वृत्तियों की रक्षा न-हीं कर सकेंगे। प्राचीन आर्य्य जाति का ऐहलौकिक सदाचार तथा उत्तम शिक्षा के विषय में पश्चिमी पण्डित मोनियर विलियमस्, (Mo-nier dilliams) पण्डित विलसन (Bilson) पण्डित काटन (Cattan) साहबों ने भली भांति वर्णन किया है। भारत वासियों की शिक्षा तथा यूरोप वासियों की शिक्षा में कितना अन्तर है, भारत बासियों के ऐहलौकिक अभाव तथा यूरोप वासियों के ऐहलौकिक अभाव में कितना भेद है उस को उदाहरण द्वारा देखने से ही प्रतीत हो सकता है। इस कारण पाठकगणों के विचार में सहायता करने के अर्थ सब से आवश्यकीय

अभाव अर्थात् सांसारिक दैनिक कार्य्य निर्वाह उपयोगी पदार्थों की एक तालिका नीचे लिखी जाती है।

वर्त्तमान आर्य्य जाति की तालिका।

बैठक घर का असबाब।

दरी, बिछाने की	१५)
चाँदनी, बिछाने की	१०)
तकिये तीन	१२)
तसवीरें आदि	२०)
दीवट आदि	५)
पापोश	॥)
क़लमदान आदि	५)
योग	६७॥)

शयन का घर।

पलंग	२०)
गद्दीतकिया आदि	२०)
दीवट आदि	२)
तसवीर	१२)
योग	५४-)

ज़नाना मकान।

पलंग	१२)
दरी	१०)

पूजन आदि का सामान	१०)
सन्दूक आदि	२०)
आइना आदि	४)
योग	५६)

रसोई व भंडार घर ।

भंडार घर का सामान	५)
रसोई घर के बरतन आदि	५०)
योग	५५)

यह सब मिलाकर आर्य्यगृहस्थ का व्यय अधिक से अधिक २३२॥) रुपये हुआ करते हैं; जिस के द्वारा एक मध्यवर्ती आर्य्य सद्गृहस्थ अपनी जीवनयात्रा कर सक्ता है।

यूरोपीय जाति की तालिका

बैठक खाना वा ड्राइङ्गरूम

ड्राइङ्गरूम सूट अर्थात् एक कोंच दो इज़ीचेयर और छः कुर्सी	१८०)
बीच का आटम्पान्	५०)
डीवानपॉट	३०)
एक बड़ाटेबल और कामों के लिये व एक बड़ा चिट्ठी लिखने के लिये	६०)
केबिनेट् आल्मारी एक	७०)
घड़ी	५०)
रंग, वा गर्दखोरा	१०)

चार दरजा जङ्गलेकापरदा —— ४५)
ऐना, दीवाल सजनेकी चीजें, घर में आग रखने की जगह कोलमसू वा कोयला रखने का बर्तन और उस का फेण्डर लोहा इत्यादि— २५)
कारपेट —— १००)
लैम्प —— १६)

योग ६३६)

दूसरे सोने का घर ॥

पांच फीट फेञ्चघड्ष्टेट् वा पलङ्ग दोदर —— ३०), ६०)
पलङ्ग की गद्दीस्पिङ्ग म्याट्रेस् —— २०)
तकिया बिछौना —— ४०)
कारपेट —— ७०)
कोयले का बर्तन इत्यादि —— १५)
छोटा टेब्ल एक —— १०)
घड़ी एक —— २०)
कम्बलजोड़ाएक —— १५)
लैम्प —— १०)

योग २६०)

तीसरा नहाने का घर ॥

ड्रेसिङ्ग टेब्ल एक —— ४०)
वाष्टेङ्ग मुंह धोने का टेब्ल —— १२)
जल के बर्तम दो —— ७)

टाइल रैक्——————————१)
पञ्च वासकट——————————॥)
नहाने का टब——————————२०)
कमोड अर्थात् मैलात्याग का बक्स दो——————————४)

योग　१४॥)

भोजन घर डाइनिङ्गरूम ॥

बालनेट अर्थात् एक ऐसा टेब्ल जिस पर छः आदमी एक साथ बैठकर भोजन करैं——————————४०)
एक मारल घड़ी——————————३५)
कुर्सी छः——————————२४)
डिनरवेगेन——————————२५)
साइडबोर्ड जिस्के बीच में बोतल इत्यादि रक्खा जाता है और पात्र इत्यादि रखने के——————————४०)
एक दर्जन नेपकिन——————————६॥।)
कारपेट——————————७०)
आगरखने का बर्तन——————————१५)
टेब्लढापने की चादर——————————२०)

योग २७५॥।)

दूसरी चीजें ॥

लड़को के सोने का कट यानी छोटी खटिया——————————१०)
चेष्ट यानी दराजदार अल्मारी——————————१८)

गीन इत्यादि कपड़ा रखने की अल्मारी	२०)
सीढ़ी पर बिछाने का कारपेट और चढ़ाईवगैरः और चाय पीने का टेब्ल	३५)
एवम् खास खाने पकाने के बर्तन और नाना प्रकार के आवश्यकीय पदार्थ जिन की तालिका की संख्या पचास से साठतक होगी	२९०)
एक टेब्ल	१०)
एकजग	१०)
डिकन्टर्स	२०)
टम्बर्स	१२)
डिजर्ट इस्पूंस छः	३०)
टी इस्पूंच छः	२०)
एग इस्पूंच छः	६)
साल्ट स्पूंच तीन	७)
बटरनाइपस वगैरा	८)
नाइप्स बारह	२४)
और क्लरट जगसेरी ग्लास वगैरा	२०)
योग	५४०)

इस उपरोक्त तालिका के देखने से अनुमान होता है कि एक साधारण यूरोपीय गृहस्थ के सांसारिक व्यवहार द्रव्यों का व्यय लगभग १८०६।/ रुपये हुआ करते हैं; किन्तु आर्य्य सद्गृहस्थ का व्यय यूरोपीय गृहस्थों के व्यय से एक अष्टम अंश के लगभग है। सूक्ष्म विचार द्वारा देखने से परस्पर के सब व्यय अर्थात् भोजन, वस्त्र, गृहपदार्थ, गृहनिर्माण आदि सब कार्य्यों में ही इस से भी अधिक व्यय भेद देखने में आवेगा। पूर्व्व दो तालिकायें एक प्रकार के अवस्था के मनुष्यों की

दी गई हैं; अर्थात् आर्य्यगणों की तथा यूरोपीयगणों की दोनों तालिकायें मध्यवर्त्ती गृहस्थों का विचार करके लिखी गई है; इन तालिकाओं के द्वारा अपने वर्त्तमान विचार का पारस्परिक सम्बन्ध पूर्णरूपेण निरूपित हो सक्ता है। इस प्रकार जितना यूरोपीय जाति का ऐहलौकिक अवस्था तथा आर्य्यगणों का ऐहलौकिक अवस्था पर ध्यान दिया जायगा उतना ही सिद्धान्त होगा कि भारतवासी अपने अभाव अनुभव में बहुत ही न्यून हैं; और अभाव न्यूनता के कारण वे सकल अवस्था में एक प्रकार से ही सुख अनुभव कर सक्ते हैं। भारतवासी चाहे धनाढ्य हो अथवा निर्धन, उन्नत हों अथवा अवनत वे अपने इस अपरिवर्तन शील सादापन तथा अभाव न्यूनतावृत्ति से सकल अवस्था में सुखी रह कर अपनी आध्यात्मिक उन्नति द्वारा पारलौकिक मङ्गल साधन कर सक्ते हैं। पूज्यपादआर्यमहर्षिगणों की दूरदर्शिता का ही यह पूर्वोक्त फल है, और उन की दूरदर्शिता द्वारा ही भारत की राजनैतिक अवस्था भी सकल समय के लिये एकरूप मङ्गल कारी है। राजनीति विचार में प्राचीन आचार्य्य गणों ने इतनी दूरदर्शिता तथा अभ्रान्त बुद्धि का परिचय दिया है कि आज दिन पृथिवी की सब जातियों में से उतनी योग्यता कोई जाति भी दिखा नहीं सकी है। राजनीति विचार में यदिच आज दिन यूरोपीय जाति ने नाना नूतन आविष्कार कर दिखाये हैं परन्तु उन काराजनीति विज्ञान सदा परिवर्तन शील ही देखने में आता है किन्तु आर्य्य राजनीति अपरिवर्तन शील तथा दृढ़ है। यूरोप ने आज दिन लिवरल (Liberal) कंसरवेटिव (Conservative.)आदि मंत्री सभा पठन की प्रणाली तथा लिमिटडमानर की (Limitd Monorchry)